17 मई 2013, कुल पृष्ठ : 8, मूल्य : 2/- आर. एन. आई. 31109/77 RJ / J. P. C / FN-32 / 2012-14

जैन पथप्रदर्शक

ए-4, बापूनगर, जयपुर - 302015 (राज.)

नैतिक एवं सामाजिक चेतना का अग्रदूत निष्पक्ष पाक्षिक

डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल के व्याख्यान प्रतिदिन अब आधे घंटे

जी-जागरण पर

प्रतिदिन प्रातः 6.30 से 7.00 बजे तक

वर्ष : 36, अंक : 4 सम्पादक : पण्डित रतनचन्द भारिल्ल आजीवन शुल्क : 251 रुपये

मई (द्वितीय), 2013 (वीर नि. संवत्-2539) सह-सम्पादक : पण्डित संजीवकुमार गोधा वार्षिक शुल्क : 25 रुपये

मण्डीदीप-भोपाल में -

जिनमंदिर का शिलान्यास संपन्न

भोपाल (म.प्र.) : यहाँ श्री दिगम्बर जैन जिनश्रुत प्रभावना समिति द्वारा शीतल टाउन मण्डीदीप में दिनांक 28 अप्रैल को श्री शीतलनाथ दिगम्बर जैन मंदिर का शिलान्यास का ऐतिहासिक कार्यक्रम संपन्न हुआ।

इस अवसर पर प्रात: 9 बजे जिनेन्द्र अर्चना एवं मंच निमंत्रण हुआ, तत्पश्चात् मंचासीन डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल, पण्डित शिखरचन्दजी सर्राफ, श्री मनोजजी प्रधान (चैयरमेन-शीतल समूह) द्वारा भगवान महावीर के चित्र का अनावरण किया गया। ट्रस्ट के अध्यक्ष श्री प्रदीपजी सोगानी द्वारा विद्वानों एवं अतिथियों का सम्मान किया गया। श्रीमती गुणमाला भारिल्ल का सम्मान श्रीमती एकता प्रधान, स्वर्णलता सौगानी एवं ट्रस्ट की उपाध्यक्ष श्रीमती अनुराधा प्रधान ने किया। कार्यक्रम का स्वागत भाषण श्री मनोजजी प्रधान ने किया।

विशाल जनसमूह को संबोधित करते हुए तत्त्ववेत्ता डॉ. भारिल्ल ने कहा कि जिस प्रकार एक रिक्शेवाला अपने बैंकखाते में करोड़ रुपये जानकर, मानकर गौरव का अनुभव करता है, उसी प्रकार ज्ञान का घनपिण्ड, आनन्द का रसकन्द, शक्तियों का संग्रहालय, अनंत गुणों का गोदाम भगवान आत्मा मैं स्वयं ही हूँ, ऐसी श्रद्धा व ज्ञान करने पर तत्काल ही अपने अनंत दु:ख दूर हो जाते हैं। यह जीव अब तक अपने को दीन-हीन, पामर मान रहा था, परन्तु जब वह जान लेता है कि मैं स्वयं ही परमात्मा हूँ, मुझे परपदार्थों से सुख नहीं मिलेगा, सुख तो स्वयं के आश्रय से ही मिलेगा, तब वह अनंत सुखी हो जाता है। अत: पर का लक्ष्य छोड़कर स्व का लक्ष्य करना ही एकमात्र कर्तव्य है।

संपूर्ण कार्यक्रम का संचालन ट्रस्ट के महामंत्री इंजी. पुनीत मंगलवर्धिनी द्वारा किया गया।

शिलान्यास-विधि का कार्य ब्र.अभिनन्दनकुमारजी शास्त्री खनियांधाना के निर्देशन में पण्डित सुनीलजी धवल भोपाल, पण्डित अनिलजी धवल भोपाल एवं पण्डित दीपकजी धवल भोपाल के सहयोग से संपन्न हुआ।

पूज्य गुरुदेवश्री कानजीस्वामी के समस्त ऑडियो - वीडियो प्रवचन साहित्य एवं अन्य अनेक जानकारियों के लिये अवश्य देखें-
वेबसाईट - www.vitragvani.com
संपर्क सूत्र-श्री कुन्दकुन्द कहान पारमार्थिक ट्रस्ट, मुम्बई
Ph. : 022-26130820, 26104912, E-Mail - info@vitragvani.com

श्री टोडरमल स्मारक भवन जयपुर में -

गुरुदेवश्री कानजीस्वामी जयन्ती संपन्न

जयपुर (राज.) : यहाँ श्री टोडरमल स्मारक भवन में दिनांक 12 मई को गुरुदेवश्री कानजीस्वामी की 124वीं जन्मजयन्ती बहुत उत्साहपूर्वक मनाई गयी।

कार्यक्रम के अध्यक्ष पण्डित रतनचन्दजी भारिल्ल, मुख्य अतिथि श्री सुशीलकुमारजी गोदीका जयपुर एवं मुख्य वक्ता तत्त्ववेत्ता डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल उपस्थित थे। इसके अतिरिक्त डॉ. श्रीयांसजी शास्त्री जयपुर, पण्डित शान्तिकुमारजी पाटील, पण्डित पीयूषजी शास्त्री, श्री अजितजी तोतूका जयपुर, श्री दिलीपभाई शाह मुम्बई, श्री ताराचन्दजी सोगानी जयपुर, श्री शान्तिलालजी जैन अलवरवाले जयपुर आदि महानुभाव भी मंचासीन थे।

इस अवसर पर पण्डित रतनचन्दजी भारिल्ल ने गुरुदेवश्री कानजीस्वामी के सम्बन्ध में कहा कि जैनधर्म के प्रमुख सिद्धान्तों में से एक क्रमबद्धपर्याय उन्हीं से समझा है। इसी तत्त्वज्ञान का प्रचार-प्रसार करने हेतु अपना सम्पूर्ण जीवन समर्पित किया है। डॉ. श्रीयांसजी शास्त्री ने अपने वक्तव्य में कहा कि गुरुदेवश्री कानजीस्वामी के जीवन में चारों अनुयोगों का सुमेल देखने को मिलता था। श्री राजेशजी विदिशा ने कहा कि डॉ. भारिल्ल ने जिस मेहनत/लगन और समर्पण के साथ महाविद्यालय रूपी पौधे को सींच-सींच कर वटवृक्ष बनाया है। आज उसका एक-एक विद्यार्थी गुरुदेव है और एक-एक धाम सोनगढ जैसा कार्य कर रहे हैं।

अन्त में डॉ. भारिल्ल ने अपने उद्बोधन में पूज्य गुरुदेवश्री के सत्समागम के अनेक महत्वपूर्ण संस्मरण सुनाये; जिससे श्रोताओं के साथ-साथ छात्रों को गुरुदेवश्री के शुद्ध-सात्विक जीवन का परिचय प्राप्त हुआ।

इसके पूर्व प्रात: पंचतीर्थ जिनालय में अ.भा. जैन युवा फैडरेशन जयपुर महानगर की मासिक पूजन की गई। इस अवसर पर 200-250 लोग उपस्थित थे।

डॉ. भारिल्ल के आगामी कार्यक्रम

22 मई से 5 जून	देवलाली	प्रशिक्षण शिविर
7 जून से 24 जुलाई	विदेश	धर्मप्रचारार्थ
4 से 13 अगस्त	जयपुर	महाविद्यालय शिविर
2 से 9 सितम्बर	मुम्बई	श्वेताम्बर पर्युषण
9 से 18 सितम्बर	इन्दौर	दशलक्षण पर्व

सम्पादकीय -

श्रुत परम्परा

- रतनचन्द भारिल्ल, शास्त्री, न्यायतीर्थ, साहित्यरत्न, एम.ए.बी.एड.

वर्तमान कालीन श्रुत परम्परा मूलत: तो तीर्थंकर भगवान महावीर स्वामी से प्रारम्भ होती है।

जब तक तीर्थंकर भगवान महावीर समवसरण (धर्मसभा) में विराजे रहे, तब तक तो उनके द्वारा भावश्रुत के रूप में द्वादशांग वाणी का लाभ वहाँ स्थित भव्यजीवों को उनके भाग्य से मौखिक मिलता रहा।

उनकी धर्मसभा (समवसरण) में भव्य मानव तो लाभ लेते ही हैं, साथ ही देव, दानव एवं भव्य सैनी पंचेन्द्रिय पशु (तिर्यंच) जीव भी उपस्थित रहकर धर्मलाभ लेते हैं।

तीर्थंकर भगवान महावीर के मुक्त होने पर उनके केवली गणधरों से लेकर जम्बूस्वामी केवली तथा उसके बाद श्रुत केवलियों द्वारा भी मौखिक उपदेश चलता रहा, वीतराग-वाणी का प्रचार-प्रसार होता रहा। इसप्रकार महावीर स्वामी के बाद 683 वर्ष तक तो मौखिक उपदेश ही चला।

बाद में लगभग ईसा की प्रथम शताब्दी में गिरनार पर्वत की चन्द्र गुफा में आचार्य धरसेन स्वामी ने रात्रि के पिछले प्रहर में अल्पनिद्रा में एक स्वप्न देखा। वे स्वप्न में देखते हैं कि दो जवान कर्मठ बलिष्ठ बैलों का जोड़ा चला आ रहा है। आंख खुली तो सामने दो प्रतिभाशाली मुनिराजों को नतमस्तक खड़ा देखा। आचार्य धरसेन को लगा कि यह स्वप्न तो मेरे विकल्प को सार्थक करता प्रतीत हो रहा है।

आचार्य धरसेन ने भगवान महावीर स्वामी द्वारा प्रतिपादित तत्त्वज्ञान एवं कर्म सिद्धान्त की सुरक्षा हेतु दक्षिण भारत के आंध्रप्रदेश में वेणनदी के तट पर हो रहे मुनिसंघ सम्मेलन से पधारे उन दो प्रतिभाशाली मुनिराजों को पढाया। मुनिराजों के मूलनाम तो कुछ और थे; परन्तु उनके बारे में एक किवदन्ती प्रचलित है कि आचार्य धरसेन ने उनकी परीक्षा लेने के लिए दोनों आगंतुक मुनिराजों को दो मंत्र दिये। उन मंत्रों में उन्होंने जानबूझकर प्रथम मंत्र में एक अक्षर कम एवं द्वितीय मंत्र में एक अक्षर अधिक रखा। जब उन्होंने उन मंत्रों की साधना की तो प्रथम मुनि के समक्ष एक कानी (एकाक्षी) देवी प्रकट हुई और दूसरे मुनि के समक्ष एक लम्बे दांत वाली (दंतकडू) देवी प्रकट हुई। तब उन मुनियों ने मंत्रों में कुछ त्रुटि जानकर स्वयं मंत्रों को ठीककर पुन: साधना की तो दोनों मुनिराजों के समक्ष दो सुन्दर रूप वाली देवियाँ प्रकट हुईं। उन देवियों के प्रसाद से प्रथम मुनिराज का शरीर बलवान हो गया और दूसरे मुनिराज की टेढी-मेढी दन्तपंक्ति सुन्दर हो गई। इसकारण उनका नाम भूतबली एवं पुष्पदंत रखा गया। वे भूतबलि व पुष्पदंत मुनिराज यथार्थ स्थिति को समझकर अपने गुरु आचार्य धरसेन के पास गये तो उन्होंने उन मुनियों की प्रतिभा को पहचानकर उन्हें पढाया। वे जो कुछ भी जानते थे, वह सब उन्हें सिखाया। जब वे व्युत्पन्न हो तो उन्हें यह सब लिपिबद्ध करने का आदेश दिया। उन मुनियों ने षट्खण्डागम के माध्यम से प्रथम श्रुतस्कन्ध के रूप में करणानुयोग के शास्त्रों की रचना की। इसप्रकार प्रथम श्रुतस्कन्ध शास्त्रों की रचना हुई।

तब उन्होंने उन शास्त्रों की पूजन की। जिस दिन यह पूजन हुई थी, वह दिन ज्येष्ठ शुक्ल पंचमी का दिन था। तब से ही यह श्रुतपंचमी पर्व चल पड़ा।

इसी काल में आचार्य कुन्दकुन्ददेव हुए। उन्होंने समयसार, प्रवचनसार, नियमसार, पंचास्तिकाय एवं अष्टपाहुड के रूप में पंचपरमागमों की रचना की। कहा जाता है कि उन्होंने और भी अनेक ग्रन्थ लिखे जो द्वितीय श्रुतस्कन्ध के रूप में प्रसिद्ध हुए।

षट्खण्डागम ग्रन्थों की अनेक टीकायें लिखी गई, जिनके टीकाकार यतिवृषभाचार्य, वीरसेनाचार्य तथा नेमीचंद आचार्य हुए। द्वितीय श्रुतस्कन्ध के टीकाकार आचार्य अमृतचन्द्र, आचार्य जयसेन आदि हुए।

इसप्रकार प्रथम व द्वितीय श्रुतस्कन्ध की रचना हुई।

द्वितीय श्रुतस्कन्ध के रचयिता आचार्य कुन्दकुन्द स्वामी ने जीवन्त तीर्थंकर सीमंधर स्वामी के साक्षात् दर्शन किये थे। जिसके प्रमाण चन्द्रगिरि, विन्ध्यगिरि के शिलालेखों में विद्यमान हैं।

उपर्युक्त समयसारादि ग्रन्थों की रचना आचार्य कुन्दकुन्ददेव द्वारा ईस्वी सन् की प्रथम शताब्दी में हुई थी। तभी से द्वितीय श्रुतस्कन्ध के रूप में इन सभी ग्रन्थों का वाचन (स्वाध्याय) भी भव्य जीवों द्वारा होता रहा है। बीच-बीच में साधनों की कमी से स्वाध्याय में बाधायें भी आती रही हैं; किन्तु हम सबके सौभाग्य से वर्तमान में नवीन साधनों का आविष्कार हुआ है, इससे स्वाध्याय की परम्परा में चार चाँद लग गये। अत: अब हमें इन वैज्ञानिक साधनों का सदुपयोग करके जिनवाणी के पठन-पाठन का लाभ लेना ही चाहिए। ●

जन्मदिवस के मंगल अवसर पर –

जैन जगत् में डॉ. भारिल्ल होने के मायने

– डॉ. अनेकान्त कुमार जैन,
जैनदर्शन विभाग, श्री लालबहादुर शास्त्री राष्ट्रीय संस्कृत विद्यापीठ, नई दिल्ली–16

लगभग पिछले छह दशकों से भी अधिक समय से अपने सिद्धान्तों के साथ स्पष्टवादिता और संतुलित भाषा शैली में जैन तत्त्वज्ञान को आबाल–गोपाल तक के दिलोदिमाग में जमाने का नियमित रूप से कार्य कर रहे डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल होने के कई मायने हैं। उन मायनों में से हम कई मायनों को समझ लेते हैं और कई को नहीं। मैंने उनके व्यक्तित्व को नजदीक से भी देखा है और दूर से भी। कई बार उन्हें उनके साहित्य, प्रवचन और उनकी रीति–नीतियों के माध्यम से अपने अन्दर महसूस करने की भी कोशिश की है। लेकिन उनके बहु–आयामी व्यक्तित्व के कुछ ही आयामों को देख पाया हूँ। उनके होने के कई अर्थ हैं, जिसमें एक प्रधान अर्थ है – सच बोलने का साहस और सलीका। मुझमें खुद कभी साहस आता है तो सलीका नहीं आता, कभी सलीका आता है तो साहस नहीं आता। कहते हैं बोलना सीखने में हमें बचपन के दो–तीन वर्ष लगते हैं पर कब, कहाँ, कैसे और क्या बोलना है – यह सीखने में पूरा जीवन लग जाता है। यही बात लेखन के साथ भी है। कुशल वक्ता के साथ ही लेखन में डॉ. साहब सिद्धहस्त सम्पादक, ग्रन्थकार, निबन्धकार तथा कवि हैं, इतना सबकुछ एक साथ, एक स्थान पर होना दुर्लभ होता है।

बीमारी और विवाद उनके हम सफर हैं। वो और ये दोनों अक्सर एक जगह एक साथ रहते हैं; किन्तु अपनी दृढ इच्छा शक्ति और संकल्पों की बदौलत उन्होंने इन्हें कभी अपने ऊपर हावी नहीं होने दिया, अपने नियमित कार्य कभी रुकने नहीं दिये। यह कम आश्चर्य नहीं कि उन्होंने इन्हें विधि के विधान और कर्मों का खेल जानकर, उपहार समझ प्यार से स्वीकार भी किया और सहन भी। इसलिए अनेक संघर्षों का जहर अपने भीतर छुपाकर वे किसी समन्दर की भांति शांत और गहरे दिखलायी देते हैं। अपनी निजी शिकन को भी वे चेहरे पर नहीं आने देते और सदा मुस्कुराते रहते हैं।

भारत में आज शायद ही कोई ऐसा विद्वान होगा, जिससे ईर्ष्या करने वालों की संख्या सबसे ज्यादा हो। मेरे पिताजी अक्सर मुझसे कहा करते हैं कि ईर्ष्या के पात्र भले ही बन जाओ, पर दया के पात्र कभी मत बनना; क्योंकि दया का पात्र वह होता है, जो ईर्ष्या करता है।

डॉ. साहब उन लोगों के प्रति भी दया की दृष्टि रखते हैं; जो उनके विरोध में पम्पलेट, पत्रिका में प्रश्नवाचक चिन्ह लगाकर कवर पृष्ठ पर उनकी फोटो तथा किताबें तक छापते हैं। वे उन पर कोई प्रतिक्रिया न करके उनकी छटपटाहट जरूर बढा देते हैं; पर ऐसा करके वे अपने समय का सदुपयोग अपने रचनात्मक कार्यों को अधिक गतिशील बनाने में करते हैं।

ऐसा नहीं है कि डॉ. साहब ने स्वयं कभी किसी की आलोचना नहीं की; की है, पर उसमें साहस और सलीका दोनों दिखलाया है।

अपनी असहमति की स्पष्ट और मर्यादित अभिव्यक्ति भी एक कला होती है, जो सभी में दिखलाई नहीं देती। सोनगढ से जन्मीं विकृतियों की भी उन्होंने हमेशा खिलाफत की है। इसलिए अपने ही गढ में उन्हें शुरु से विरोध झेलना पड़ा तो दूसरी तरफ बाहर से हमेशा मुनिपंथियों की आंखों की किरकिरी भी बने रहे, इनमें विरोध झेलने तथा उससे न घबड़ाने की अपूर्व क्षमता दिखलायी देती है।

मेरे स्वयं दिगम्बर मुनिपंथ (तेरापंथ, बीसपंथ) मुमुक्षु, श्वेताम्बर, तेरापंथ, स्थानकवासी, मूर्तिपूजक आदि अनेक विभक्त सम्प्रदायों से गहरे तालुकात रहे हैं और हैं। मैंने यह पाया है कि अन्य सम्प्रदायों में यदि मुमुक्षु समाज की कोई पहचान बनी है तो डॉ. साहब के कारण बनी है, लोग उन्हें ही जानते हैं; क्योंकि वे सभी जगह जाते हैं।

अन्य शास्त्रीय जैन विद्वत्परम्परा में भी मुमुक्षुओं में से निमन्त्रणीय कोई दिग्गज विद्वान समझ में आता है तो वे भी डॉ. साहब ही दिखायी देते हैं।

कानजीस्वामी की आध्यात्मिक प्रवचनकारों की शिष्यपरम्परा में यदि संस्कृत की शास्त्रीय पद्धति से प्रशिक्षित डॉ. भारिल्ल न होते तो इस परम्परा को बहुत बड़ा विस्थापन झेलना पड़ता – यह एक यथार्थ तथ्य है।

उनके चिन्तन को व्यवस्थित, शास्त्रीय प्रमाण सहित सम्पूर्ण जैन समाज के मध्य प्रतिष्ठित करने का श्रेय भी डॉ. साहब को ही जाता है। अन्यथा कानजीस्वामी का चिन्तन श्रीमद्राजचन्द्र आदि अनेक आध्यात्मिक साधकों की तरह उन्हीं की चारदीवारी में गूंज कर रह जाता।

जैन समाज की भी यह विशेषता रही है कि उसने कभी नये चिन्तन को फलने–फूलने का मौका नहीं दिया। इसीलिए जैनदर्शन नदी बन उन्मुक्त बहकर जन–जन की प्यास बुझाने की बजाय राजमहलों की बावड़ियों में इकट्ठा होकर आज भी बस रजवाड़ों की शोभा जैसा ही बना हुआ है।

यह बात मैं कई बार कहता हूँ कि हमें चिन्तन के स्तर पर कभी दरिद्र नहीं होना चाहिए। जो जिस लायक है, जिसका जैसा और जितना योगदान है; कम से कम उतना तो हमें स्वीकार करना ही चाहिए। यह बात मैंने मुनि श्री तरुणसागरजी के बारे में लिखते समय भी की थी कि मैंने आज तक कभी अजैनों के मध्य जैनमुनि के प्रवचनों का इतना जबरदस्त क्रेज नहीं देखा, जितना तरुणसागरजी का है। उनका साहित्य रेलवे स्टेशन के बुकस्टालों पर भी ऊँचे दामों में भी बिकता है। जैन संस्कृति का इतना ज्यादा सामान्यीकरण मुनिश्री के अलावा किसी का दिखाई नहीं देता। हम जैनधर्म की जिस ख्याति के लिए तरसते हैं, कोई कर दिखाये तो उसी की टांग खींचने लगते हैं, उसकी निन्दा करने लगते हैं। कुछ बातें हर प्रसिद्ध व्यक्ति की आलोच्य हो सकती है, होती भी है; लेकिन उसने जो कुछ दिया हे; कम से कम उतना क्रडिट तो उस व्यक्ति को मिलना ही चाहिए। उसके समग्र जीवन के योगदान का मूल्यांकन मात्र उसकी निन्दा करना नहीं है।

हमें धन्यवाद देना भी सीखना चाहिए।

आज डॉ. साहब ने हजारों विद्वानों तथा प्रवचनकारों की फौज खड़ी कर दी है, लाखों साहित्य समाज की रग-रग में पहुँचा दिया है तो सिर्फ सोनगड़िया कहकर उनके अवदान को उपेक्षित नहीं किया जा सकता, यह तो कृपणता होगी।

डॉ. साहब यदि आचार्य श्री विद्यानन्द मुनिराज के सान्निध्य में समयसार वाचना करते हैं, तो निश्चित रूप से उनसे कुछ विशिष्ट अर्थ सीखते हैं और स्वयं का चिन्तन भी बतलाते हैं। जैन एकता के प्रतीक के रूप में किसी मन्दिर में श्वेताम्बरमूर्ति की वेदी के साथ दिगम्बरमूर्ति की अनुमोदना करते हैं, श्वेताम्बर भाईयों के निमन्त्रण पर भी उन्हें जैन तत्त्वज्ञान प्रदान करने देश-विदेश में भ्रमण करते हैं तो यह उनकी उदात्त भावना का प्रतीक है और यही कारण है कि मुमुक्षु समाज भी समाज की मुख्य धारा में चलने की सोच पाता है, अन्यथा आप अलग-थलग पड़े रहेंगे तो न तो खुद का कोई भविष्य तय कर पायेंगे और न समाज का। यदि उनकी इसप्रकार की रीति-नीति को हम हतोत्साहित करने का प्रयास करते हैं तो वास्तव में हम खुद के पैरों पर कुल्हाड़ी मार रहे हैं और अपनी सीमित शक्ति, धन, साधन, ट्रस्ट, संस्था आदि का दुरुपयोग ही कर रहे हैं।

मैं मानता हूँ कि हर बात में मिथ्यात्व का डर उन्हें सताता है, जिन्हें खुद की नीयत और सम्यक्त्व पर भरोसा नहीं है। मैं तो मुसलमानों तक के अन्तरराष्ट्रीय मंच पर भी अहिंसा और शाकाहार की बात कहता हूँ, फिर भी वे मुझे बार-बार बुलाते हैं और सुनते हैं। जब मैं अनेकान्त दर्शन की व्यापकता बताता हूँ तब अजैन अक्सर यह प्रश्न करते हैं कि अनेकान्त दर्शन का प्रयोग स्वयं जैन समाज खुद को समझाने और विवादों को सुलझाने में क्यों नहीं करता ? उनके प्रश्नों का कोई सन्तोषजनक उत्तर हम आज तक नहीं दे पाये हैं।

सम्पूर्ण समाज को व्यक्तिवाद से भी बचना चाहिए और विद्वानों, प्रतिष्ठाचार्यों को अपनी व्यक्तिगत कषायों को कम करके सार्वजनिक हित को दृष्टि में रखकर, सबको साथ लेकर रचनात्मक कार्य करना चाहिए, अन्यथा दिशाहीन होते और बिखरते देर नहीं लगेगी।

डॉ. साहब सबको एक सूत्र में पिरोकर चलने का प्रयास कर रहे हैं; इसलिए उनकी सीमा में सिर्फ वृहत्तर भारतीय जैन समाज ही नहीं, वरन् विदेशों में बसा हुआ जैन समाज भी है। इसमें खुद की लोकेषणा का लोभ उनमें बिलकुल नहीं है - ऐसा तो हम निश्चित रूप से नहीं कह सकते; किन्तु यदि है भी तो इसमें आश्चर्य क्या है ? वो तो हम, आप और सन्तों तक में है। हमें कोई मौका मिल जाये तो हम चूकते हैं क्या ? खुद को मौका नहीं मिला तो जिसे मिला है, उससे ईर्ष्या या उसकी निन्दा करो-क्या हमारा यही काम रह गया है ?

फिर भी भारत के नगर-नगर में उनका अभिनन्दन समारोह आयोजित होना या करवाया जाना आलोचना का कम, ईर्ष्या का ज्यादा केन्द्र बना। यशवन्त कोठारी ने अपनी व्यंग्यात्मक पुस्तक 'हिन्दी की अन्तिम किताब' में पुरस्कार की परिभाषा करते हुये लिखा है कि जो मुझे मिलना चाहिए था और दूसरे को मिल गया, उसी का नाम पुरस्कार है। यही दशा हम जैसे अनेक विद्वानों की हो रही है। उनके जैसा कुछ करना नहीं चाहते, पर उनके जैसा पाना सबकुछ चाहते हैं। आज उनमें इतनी क्षमता है, वो इस योग्य हैं; इसलिये उनका हर जगह अभिनन्दन अतिशयोक्ति नहीं लगता। यदि इससे उनकी स्वयं की मान कषाय में वृद्धि होती है तो यह उनके कल्याण में हानिकारक होगा, इसमें हम इतने चिंतित क्यों दिखायी दे रहे हैं ?

उनका सम्मान करने से हमारी कृतज्ञता प्रकट होती है और नयी पीढी को प्रेरणा और संस्कार प्राप्त होते हैं, हमें तो लाभ ही है। फिर भी उनकी इस लोकेषणीय प्रवृत्ति में लोकषणा का प्रतिशत कम तथा इस माध्यम से जैनतत्त्वज्ञान की प्रतिष्ठा का प्रतिशत ज्यादा दिखलाई देता है।

मैं तो यह सोचकर प्रसन्न होता हूँ कि इस सदी में कोई तो ऐसा जैन विद्वान हुआ है, जिसका अभिनन्दन समारोह नगर-नगर में हो रहा है। समाज में शास्त्रीय विद्वानों की किस हद तक मान्यता या सम्मान है - यह सभी जानते हैं। यह शास्त्रीय पण्डितों की पूरी जमात का अभिनन्दन समझा जाना चाहिए, इस दृष्टि से वे हमारे प्रतीक बन गये हैं। यूं समझिये वे जैन विद्वत्जगत् के अमिताभ बच्चन हैं, जो उम्र के इस पड़ाव में भी हम युवाओं से ज्यादा जोश और होश - दोनों रखते हैं।

वे एक ऐसे लेखक और प्रवचनकार हैं, जो कुछ लोगों से उपेक्षित होने के बावजूद अपने पाठकों और श्रोताओं के कारण ही अविस्मरणीय और बड़े हुए हैं। आज भी भारत ही नहीं, बल्कि विदेशों में भी सबसे अधिक पढा और सुना जाने वाला यदि कोई गृहस्थ जैन विद्वान है तो वे डॉ. साहब ही हैं। इसका सबसे बड़ा कारण उनका आध्यात्मिक तथा सामाजिक यथार्थवादी दृष्टिकोण है। वे मूल समस्या से सीधा साक्षात्कार करते हैं और अपने रचनाशिल्प के कारण विचारों को झकझोरते और भावना को छूते हैं।

उनकी यथार्थवादी दृष्टि इस बात से भी सिद्ध होती है कि उन्होंने कभी भी खुद को सम्यग्दृष्टि जैसा कुछ घोषित या सिद्ध करने का प्रयास नहीं किया, चाहते तो कर सकते थे; क्योंकि इसप्रकार के हथकण्डे अपना कर गुजराती मुमुक्षुओं में पुजना कोई कठिन काम नहीं है। लेकिन इसप्रकार के भ्रामक व्यक्तित्व निर्माण के वे कभी हिमायती नहीं रहे और न शिष्यों को ऐसी प्रेरणा दी। अपनी दुर्द्धर्ष रचनाधर्मिता, प्रज्ञाशीलता और उदात्तता के बल पर ही वे विरोधों के बीच भी अडिग होने की क्षमता रखते हैं। उनके विरोधों, निन्दा या आलोचना से उनकी कोई हानि होती हो या न होती हो, पर सौमनस्क की इस धारा के विकास में जरूर अवरोध आ सकता है, जो आत्मघात जैसा ही कुछ होगा, किन्तु यह बाद में पता चलेगा। हाथी का विरोध या आलोचना करने के लिए भी हाथी या शेर जैसा ही कुछ होना चाहिए, अन्य जीव-जन्तु यदि ऐसा करते हैं तो उसमें विरोध कम छटपटाहट और हताशा ज्यादा नजर आती है। डॉ. साहब से वैमत्य रखने वाले श्री नीरज जैन जी की समीक्षायें पढता हूँ तो कुछ दम नजर आती है।

डॉ. साहब की समीक्षा भी जरूर होनी चाहिए। वे कोई भगवान या केवलज्ञानी थोड़े ही हैं, जो उनकी लिखी या कही हर बात अक्षरश: सही

ही हो। वे वो व्यक्त करते हैं तो उनकी प्रज्ञा में सही बैठता है, जिसे वो सच जानते या मानते हैं। वो मानते या जानते कुछ और हैं और कहते या लिखते कुछ और ही हैं – ऐसा बिलकुल नहीं है। उनके लिखे या कहे की समीक्षा जरूर की जानी चाहिए, किन्तु उनके स्तर की प्रज्ञा धारण करके तथा उन्हें गहनता से पढकर। चूंकि वे कोई भी बात या तो आगम प्रमाण से सिद्ध करते हैं या तर्क प्रमाण से। शास्त्रोक्त प्रमाण सहित ही उनकी ऐसी समीक्षा की जानी चाहिए, जिसे पढकर या सुनकर उन्हें भी आनन्द आये और उत्तर देने में दम लगानी पड़े। इसमें यदि कोई सही बात सामने निकलकर आती है तो उन्हें भी अपनी गलती विनम्रतापूर्वक स्वीकार करना चाहिए और मुझे नहीं लगता कि इस मामले में वे कोई जिद या दुराग्रह रखेंगे। अन्यथा वेदों को बिना पढे उसकी आलोचना, गांधी को बिना समझे या पढे उनकी समीक्षा, जैनदर्शन का क ख ग जाने बिना उसकी आलोचना करने वालों की भी कमी नहीं है।

ये तात्कालिक माहौल भले ही खराब कर देते हों पर कोई स्थायी प्रभाव नहीं डाल पाते। इन दिनों जैन पत्रकारिता में भी कुछ खास समालोचना मुखरित नहीं हो पा रही है। हम आलोचना का अर्थ निन्दा समझते हैं और समीक्षा का अर्थ प्रशंसा। हम स्वस्थ समालोचना की तरफ क्यों नहीं देखते? हम व्यक्ति या साहित्य की या तो भक्ति करने लग जाते हैं या निन्दा। इसके अलावा तीसरी कोई चीज जिसमें समभाव से गुणों या दोषों दोनों का विवेचन होता है – हमारी दृष्टि में क्यों नहीं आती ? समालोचना में भी राग–द्वेष से ऊपर उठकर साक्षीभाव से मात्र गुण–दोषों का मूल्यांकन होना चाहिए। इसलिये हमें विवेक से काम लेना चाहिए। उनमें भी कुछ मानवीय कमजोरियाँ हैं, जैसे विगत दशवर्षों से उनके रचित साहित्य में स्वयं उनका विभिन्न मुद्राओं में ग्लैमरस चित्र मुखपृष्ठ पर प्रकाशित होने लगा है, जो कि पहले नहीं था, ऐसी ही कुछ बातें और भी हैं जैसे ट्रस्ट में परिवारवाद चलाना और विभिन्न पदों पर मात्र अपने घर के लोगों अथवा रिश्तेदारों को ही रखना। ट्रस्ट से वे ही अधिकांश साहित्य प्रकाशित होना जो या तो उन्होंने, परिवार वालों ने या ट्रस्टियों ने लिखे हों, या फिर वे साहित्य जो उन पर लिखे गये हों।

ये बातें उनकी गरिमा या उनके तेजस्वी व्यक्तित्व को थोड़ा सस्ता बनाती हैं, लेकिन जैसा कि मैंने कहा कि वो भगवान तो नहीं हैं और ऐसी कमजोरियाँ किसमें नहीं हैं ? यदि हम छिद्रान्वेषी बन वृक्ष की पत्तियों के दलों के मध्य से आती धूप की देखते रहेंगे तो छायासुख का अनुभव कैसे कर पायेंगे ?

जैनविद्या के क्षेत्र में उनका जो सार्वजनीन योगदान है; वो इतना अधिक भव्य और विशाल है कि उनकी सहज मानवीय कमजोरियाँ भी एक किस्म की विशेषता दिखायी देने लगती हैं। यह मेरा अनुभूत सत्य है कि जिन लोगों में कोई दुर्गुण नहीं होते, उनमें गुण भी प्राय: कम ही होते हैं। ध्यान रखिये, जैन समाज को भविष्य में ऐसा व्यक्तित्व दोबारा मिल जायेगा, इस बात की गारण्टी नहीं है। इन सब बातों के बावजूद हमें भी डॉ. साहब से निवेदन करना चाहिए कि अब आप भी इन व्यवहार जगत की सभी बातों से सन्यास लेकर कम से कम गृहस्थ सन्यासी जरूर बन जाइये, खुद को तमाम विवादों और राजनीति से दूर रखकर शांतिचित्त भाव से जितना अधिक से अधिक गम्भीर साहित्य सर्जन कर सकें, कर दीजिए। अपनी सीमित शक्ति और साधन का उपयोग जिनवाणी लेखन और प्रकाशन में करके अपना सम्पूर्ण व्यवस्थित चिन्तन इस जगत् को दे जाइये; क्योंकि भविष्य में न वाणी सुरक्षित रहेगी, न विवाद; यदि कुछ बचा तो वो होगा सिर्फ साहित्य और वही जिनवाणी को भी अमर बनायेगा और आपको भी।

व्यक्तिगत कषाय या दुराग्रह के कारण आपके लेखन और चिन्तन को जो आज नहीं स्वीकार कर पा रहे हैं वे कल करेंगे; किन्तु यदि सदा की तरह उसमें भी दम रहा तो। कुछ वृद्ध लोगों के पास तो इनसे प्रेरणा लेने का अब अवकाश शायद न बचा हो; किन्तु मेरे जैसे युवा साथी जो आग्रह या दुराग्रह के कारण अभी तक उनके व्यक्तित्व और कर्तृत्व से अपरिचित हैं; वे प्रेरणा ग्रहण कर सकते हैं कि जो कुछ गलत चल रहा है; उसका समर्थन करके, लाभ और सम्मान प्राप्त करके, समाजसेवा या जिनवाणी सेवा करना एक अलग बात है और गलत को गलत कहकर, उन्हीं का विरोध सहकर, उन्हीं की सेवा करना एक जुदी बात है, हिम्मत की बात है और अनुकरणीय है। लेकिन दु:ख की बात यह भी है कि हम सभी ने मिलकर इन विषयों पर समाज का वातावरण इतना विषाक्त बनाकर रखा है कि अपने ही धर्म के अन्य सम्प्रदायों का साहित्य रखना, पढना ही अपने आप में एक जघन्य अपराध जैसा बन गया है। हमारा बच्चा बुक स्टॉल से अश्लील उपन्यास लाकर पढे तो भी इतना क्रोध नहीं आयेगा, जितना अन्य सम्प्रदाय द्वारा लिखित जिनवाणी पढने पर आता है – यह हम सभी का दुर्भाग्य है।

ऐसे में हम सभी को क्या करना चाहिए ? मेरे ख्याल से रोज मेरी भावना पढनी चाहिए और उसे जीवन में उतारने का प्रयास करना चाहिए–

गुण ग्रहण का भाव रहे नित दृष्टि न दोषों पर जावे.....
बैर पाप अभिमान छोड़ जग नित्य नये मंगल गावे.....
घर–घर चर्चा रहे धर्म की दुष्कृत दुष्कर हो जावे.....

– ए 93/7 ए, छतरपुर एक्सटेन्शन, नई दिल्ली–74

शोक समाचार

1. सागर (म.प्र.) निवासी सिंघई बाबूलालजी सर्राफ का दिनांक 10 अप्रैल को 94 वर्ष की आयु में समताभावपूर्वक देहावसान हो गया। आप बहुत स्वाध्यायी थे। गुरुदेव के जीवनकाल में आप प्रतिवर्ष सोनगढ शिविर में एवं उसके पश्चात् सन् 2000 तक जयपुर शिविरों में जाते रहे। आपकी स्मृति में टोडरमल स्मारक ट्रस्ट हेतु 1101/– रुपये प्राप्त हुये।

2. कोलकाता निवासी श्री जुगराजजी कासलीवाल की धर्मपत्नी श्रीमती कंचनदेवी का दिनांक 6 मई को 85 वर्ष की आयु में शांतपरिणामोंपूर्वक देहावसान हो गया। आपकी स्मृति में टोडरमल स्मारक ट्रस्ट हेतु 2200/– रुपये प्राप्त हुये।

दिवंगत आत्मायें चतुर्गति के दु:खों से छूटकर शीघ्र ही अनंत सुख को प्राप्त करें–यही मंगल भावना है।

रहस्य : रहस्यपूर्ण चिट्ठी का

116 सातवाँ प्रवचन

-डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल

(गतांक से आगे ...)

क्या आगम में दुहरे कथन भी किये गये हैं?

इसके उत्तर में पण्डितजी कहते हैं कि स्थूलता और सूक्ष्मता के भेद से कथन दो प्रकार के होते हैं। आगम में इसप्रकार के बहुत कथन प्राप्त होते हैं, जिनमें स्थूलता और सूक्ष्मता की अपेक्षा बहुत अन्तर दिखाई देता है।

एक ओर तो छठवें गुणस्थान में ब्रह्मचर्य महाव्रत कहा और दूसरी ओर मैथुनसंज्ञा नौवें गुणस्थान तक कही।

नौवें गुणस्थान तक मैथुन संज्ञा होने की स्थिति में पूर्ण ब्रह्मचर्यरूप ब्रह्मचर्य महाव्रत कैसे हो सकता है ?

इस प्रश्न का एकमात्र उत्तर यही हो सकता है कि छठवें गुणस्थान में महाव्रत कहकर पूर्ण ब्रह्मचर्य कहना स्थूल कथन है और मैथुन संज्ञा नौवें गुणस्थान तक कहना सूक्ष्म कथन है।

उसीप्रकार यहाँ अनुभव के काल में पर को नहीं जानना और निर्विकल्पता कहना स्थूल कथन है और पृथक्त्ववितर्क शुक्लध्यान में पर को जानना और कषायों के रूप में विकल्पों का सद्भाव दशवें गुणस्थान तक कहना सूक्ष्म कथन है।

यह तो आप जानते ही हैं कि स्थूल कथन अर्थात् सामान्य कथन से सूक्ष्म कथन अर्थात् विशेष कथन बलवान होता है। कहा भी है –

सामान्यशास्त्रतो नूनं विशेषो बलवान भवेत्।[१]

निर्विशेषं हि सामान्यं भवेत्खरविषाणवत्।[२]

सामान्य कथन से विशेष कथन बलवान होता है और विशेष से रहित सामान्य गधे के सींग के समान है। तात्पर्य यह है कि विशेष से रहित सामान्य का जगत में अस्तित्त्व ही नहीं है।

कौन-सा कथन स्थूल है और कौन-सा सूक्ष्म – इस संदर्भ में भी अनेक प्रकार की बातें चलती हैं; यही कारण है कि यहाँ पण्डितजी उनको भी स्पष्ट कर देते हैं। उनके अनुसार **छद्मस्थ को भी जानने में आनेवाले कथन स्थूल कथन हैं और मात्र केवली के ज्ञान में आनेवाले कथन सूक्ष्म कथन हैं।** उक्त सूक्ष्म कथनों को छद्मस्थ लोग केवली के कथनानुसार जानते हैं।

अगले प्रश्न और उनके उत्तर देते हुए पण्डितजी लिखते हैं –

''तथा भाईजी, तुमने तीन दृष्टान्त लिखे व दृष्टान्त में प्रश्न लिखा, सो दृष्टान्त सर्वांग मिलता नहीं है। दृष्टान्त है वह एक प्रयोजन को बतलाता है; सो यहाँ द्वितीया का विधु (चन्द्रमा), जलविन्दु, अग्निकणिका – यह तो एकदेश है और पूर्णमासी का चन्द्र, महासागर तथा अग्निकुण्ड – यह सर्वदेश हैं।

उसीप्रकार चौथे गुणस्थान में आत्मा के ज्ञानादिगुण एकदेश प्रगट हुए हैं, तेरहवें गुणस्थान में आत्मा के ज्ञानादिक गुण सर्वथा प्रगट होते हैं और जैसे दृष्टान्तों की एक जाति है, वैसे ही जितने व्रत-अव्रत-सम्यग्दृष्टि के प्रगट हुए हैं, उनकी और तेरहवें गुणस्थान में जो गुण प्रगट होते हैं उनकी एक जाति है।

वहाँ तुमने प्रश्न लिखा था कि एक जाति है तो जिसप्रकार केवली सर्व ज्ञेयों को प्रत्यक्ष जानते हैं; उसीप्रकार चौथे गुणस्थानवाला भी आत्मा को प्रत्यक्ष जानता होगा ?

१. मोक्षमार्गप्रकाशक, २०२ पेज पर उद्धृत २. आलापपद्धति, श्लोक ९

उत्तर : भाईजी, प्रत्यक्षता की अपेक्षा एक जाति नहीं है, सम्यग्ज्ञान की अपेक्षा एक जाति है। चौथे गुणस्थानवाले को मति-श्रुतरूप सम्यग्ज्ञान है और तेरहवें गुणस्थानवाले को केवलरूप सम्यग्ज्ञान है।

तथा एकदेश सर्वदेश का अन्तर तो इतना ही है कि मति-श्रुतज्ञान वाला अमूर्तिक वस्तु को अप्रत्यक्ष और मूर्तिक वस्तु को भी प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष, किंचित् अनुक्रम से जानता है तथा सर्वथा सर्व वस्तु को केवलज्ञान युगपत् जानता है।

वह परोक्ष जानता है, यह प्रत्यक्ष जानता है – इतना ही विशेष है।

और सर्वप्रकार एक ही जाति कहें तो जिसप्रकार केवली युगपत् प्रत्यक्ष अप्रयोजनरूप ज्ञेय को निर्विकल्परूप जानते हैं; उसीप्रकार यह भी जाने – ऐसा तो है नहीं; इसलिए प्रत्यक्ष-परोक्ष का विशेष जानना। उक्तं च अष्टसहस्री मध्ये –

स्याद्वादकेवलज्ञाने सर्वतत्त्वप्रकाशने।

भेदः साक्षादसाक्षाच्च ह्यवस्त्वन्यतमं भवेत्।।[१]

अर्थ : स्याद्वाद अर्थात् श्रुतज्ञान और केवलज्ञान – यह दोनों सर्व तत्त्वों का प्रकाशन करनेवाले हैं। विशेष इतना ही है कि केवलज्ञान प्रत्यक्ष है, श्रुतज्ञान परोक्ष है; परन्तु वस्तु है सो और नहीं है।

तथा तुमने निश्चय सम्यक्त्व का स्वरूप और व्यवहार सम्यक्त्व का स्वरूप लिखा है सो सत्य है; परन्तु इतना जानना कि सम्यक्त्वी के व्यवहार सम्यक्त्व में व अन्य काल में अंतरंग निश्चयसम्यक्त्व गर्भित है, सदैव गमनरूप रहता है।

तथा तुमने लिखा – कोई साधर्मी कहता है कि आत्मा को प्रत्यक्ष जाने तो कर्मवर्गणा को प्रत्यक्ष क्यों न जाने ?

सो कहते हैं कि आत्मा को तो प्रत्यक्ष केवली ही जानते हैं, कर्मवर्गणा को अवधिज्ञानी भी जानते हैं।

तथा तुमने लिखा – द्वितीया के चन्द्रमा की भाँति आत्मा के प्रदेश थोड़े से खुले कहो ?

उत्तर : यह दृष्टान्त प्रदेशों की अपेक्षा नहीं है, यह दृष्टान्त गुण की अपेक्षा है।[२]''

स्वामीजी उक्त प्रकरण का भाव इसप्रकार स्पष्ट करते हैं –

''जैसे पूर्णिमा का अंश दोज है, समुद्र का अंश जलबिन्दु है और बड़े अग्निकुण्ड का अंश एक अग्निकण है – इन दृष्टान्तों में तो क्षेत्र अपेक्षा से अंश-अंशीपना है; परन्तु आत्मा में जो श्रुतज्ञान को पूर्ण ज्ञान का अंश कहा, उसमें क्षेत्र अपेक्षा से अंश-अंशीपना नहीं है, अपितु भाव अपेक्षा से है; क्षेत्र तो दोनों का एक ही है।

जैसे दोज का चन्द्र उदित होने पर चन्द्र का थोड़ा सा क्षेत्र खुला और शेष ढंका हुआ है, वैसे आत्मा में कहीं थोड़े प्रदेश निरावरण हुए और अन्य प्रदेश आवरणवाले रहे – ऐसा नहीं है; अपितु जैसे पूर्णचन्द्र प्रकाश देता है, वैसे दोज का चन्द्र भी प्रकाश देता है; प्रकाश देने का स्वभाव दोनों में एक सा है; एक पूरा प्रकाश देता है, दूसरा अल्प प्रकाश देता है – इतना ही फर्क है। वैसे यहाँ आत्मा के केवलज्ञान पूर्ण प्रकाश करनेवाला है और मति-श्रुतज्ञान दोज के चन्द्र की तरह अल्प प्रकाश देता है, प्रकाश देने का स्वभाव दोनों में एक-सा है, अत: दोनों की एक ही जाति है। इसप्रकार इनमें अंश-अंशित्व समझना।[३]

विशेष यह है कि तेरहवें गुणस्थान का केवलज्ञान व चौथे गुणस्थान

१. अष्टसहस्री : परिच्छेद १०, कारिका १०५

२. रहस्यपूर्णचिट्ठी : मोक्षमार्गप्रकाशक, पृष्ठ ३४७-३४९

३. अध्यात्म संदेश, पृष्ठ १०९-११०

का सम्यक् मति–श्रुतज्ञान – इन दोनों में सम्यक्पने की अपेक्षा से एक जाति है; परन्तु जैसे केवलज्ञान समस्त पदार्थों को, असंख्य आत्मप्रदेश आदि को भी प्रत्यक्ष साक्षात् जानता है, वैसे मति–श्रुतज्ञान प्रत्यक्ष नहीं जानता; अत: प्रत्यक्षपने की अपेक्षा से तो इन दोनों में समानता नहीं है, परन्तु जाति अपेक्षा से समानता है।[१]

कोई कहे कि चतुर्थ गुणस्थान में निश्चय–सम्यक्त्व नहीं होता तो यह बात सच्ची नहीं। चौथे गुणस्थान से ही निश्चयसम्यक्त्व का निरन्तर परिणमन है। व्यवहार–सम्यक्त्व के साथ ही निश्चय–सम्यक्त्व यदि विद्यमान न हो तो वह व्यवहार–सम्यक्त्व भी सच्चा नहीं अर्थात् वहाँ सम्यक्त्व ही विद्यमान नहीं; परन्तु मिथ्यात्व है।

यहाँ व्यवहार–सम्यक्त्व में निश्चय सम्यक्त्व गर्भित है – ऐसा कहा; गर्भित का अर्थ 'गौण' नहीं समझना; परन्तु एक वस्तु के कहने से दूसरी वस्तु उसमें आ ही जाय – ऐसा यहाँ 'गर्भित' का अर्थ समझना।[२]

जैसे अवधिज्ञानी कार्माणवर्गणा वगैरह को प्रत्यक्ष देखते हैं, वैसे सम्यग्दृष्टि स्वानुभव में आत्मप्रदेश को प्रत्यक्ष नहीं देखते। आत्मप्रदेशों को प्रत्यक्ष तो केवली भगवान ही देखते हैं; **समकिती के स्वानुभव में जो प्रत्यक्षपना कहा है, वह प्रदेश की अपेक्षा से नहीं कहा; परन्तु स्वानुभव में इन्द्रियादि का अवलम्बन नहीं है, इस अपेक्षा से कहा है।**

सम्यग्दृष्टि साधक जीव कर्मवर्गणादि को तो प्रत्यक्ष जानें या न जानें – इससे उनके साधकपने में अन्तर नहीं पड़ता; परन्तु आत्मा को तो स्वानुभव से प्रत्यक्ष जाने ही; क्योंकि इसके साथ साधकपने का संबंध है। वे कर्मवर्गणा को प्रत्यक्ष न जानें तो भी श्रुतज्ञान के द्वारा स्वरूप में लीन होकर केवलज्ञान पा सकते हैं।

आत्मा के कुछ प्रदेश खुल जायें और शेष प्रदेश आवरणवाले रहें – इसप्रकार के प्रदेशभेद आत्मा में नहीं हैं। जो सम्यग्दर्शनादि होते हैं, वे आत्मा के समस्त असंख्य प्रदेश में सर्वत्र होते हैं; अत: 'आत्मा के थोड़े प्रदेश खुल गये और दूसरे आवरणवाले रहे' – ऐसे अर्थ में तो दोज के चन्द्रमा का दृष्टान्त नहीं है; वह दृष्टान्त क्षेत्र अपेक्षा से नहीं, किन्तु गुण अपेक्षा से है; अतएव **सम्यग्दर्शन होने पर चतुर्थ गुणस्थान में ज्ञानादि गुणों का कुछ सामर्थ्य खिल गया है और कुछ सामर्थ्य अभी खिलने को बाकी है – ऐसा समझना।**[३]''

मुल्तानवाले भाइयों ने दोज और पूर्णमासी के चन्द्रमा, जलबिन्दु और महासागर तथा अग्नि की चिनगारी और अग्निकुण्ड की समानता के आधार पर क्षयोपशमज्ञान और क्षायिकज्ञान को समान मानकर जिसप्रकार तेरहवें गुणस्थानवाले केवलज्ञानी सभी पदार्थों को प्रत्यक्ष जानते हैं; उसीप्रकार चौथे गुणस्थानवाले सम्यग्ज्ञानी जीव भी आत्मा को प्रत्यक्ष जानते होंगे – इसप्रकार का प्रश्न उपस्थित किया था।

उक्त प्रश्न का उत्तर देते हुए पण्डितजी बड़ी ही सरलता से कहते हैं कि **चौथे गुणस्थानवाले सम्यग्दृष्टि के ज्ञान में और तेरहवें गुणस्थानवाले सम्यग्दृष्टि के केवलज्ञान में ज्ञान के सम्यक् होने की अपेक्षा समानता है, सम्यग्ज्ञान की अपेक्षा समानता है; प्रत्यक्षपने की अपेक्षा समानता नहीं है।**

जिसप्रकार केवलज्ञानी का ज्ञान सम्यग्ज्ञान है; उसीप्रकार सम्यग्दृष्टि का ज्ञान भी सम्यग्ज्ञान ही है, मिथ्याज्ञान नहीं; तथापि जिसप्रकार केवलज्ञानी सभी पदार्थों को अनन्त गुण–पर्यायों सहित एक समय में प्रत्यक्ष जानते हैं; उसीप्रकार सम्यग्ज्ञानी सबको सभी पर्यायों के साथ नहीं जानते, प्रत्यक्ष

(शेष पृष्ठ 8 पर...)

१. अध्यात्म संदेश, पृष्ठ ११० २. वही, पृष्ठ ११८
३. वही, १२४–१२५

डॉ. भारिल्ल का परिवर्तित विदेश कार्यक्रम

डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल प्रतिवर्ष की भाँति इस वर्ष 2013 में भी धर्मप्रचारार्थ विदेश जा रहे हैं। यह उनकी 31वीं विदेश यात्रा है। जिन भारतवासी बन्धुओं के परिवार या सम्बन्धी निम्न स्थानों पर रहते हों, वे उन्हें सूचित कर दें। उनकी सुविधा के लिए वहाँ के फोन, फैक्स एवं ई.मेल दिये जा रहे हैं, जहाँ डॉ. भारिल्ल ठहरेंगे। डॉ. भारिल्ल, पं. संजीवकुमारजी गोधा एवं स्वानुभूति जैन के कार्यक्रमों का आयोजन (**JAANA**) द्वारा किया जा रहा है। डॉ. भारिल्ल का नगरवार कार्यक्रम निम्नानुसार है –

क्र.	शहर	सम्पर्क–सूत्र	दिनांक
1.	लन्दन	**Bhimji Bhai Shah 0044-1923826135 E-mail : bhimji@yahoo.com Jayanti Bhai (Gutka) 0044-208 907 8257 (H) E-mail : jdgudhka@intraport.co.uk**	7 से 13 जून
2.	न्यूयार्क	**Abhay/Ulka Kothari C : 516-314-6937 Emil-ukothari@verizon.net Dr. Hemant Bhai Shah Email-hemantshahmd@aol.com (M) 201-759-3202**	14 से 18 जून
3.	डलास	**Atul Khara R : 972-8676535 O : 972-424-4902 C : 469-831-2163 Email - insty@verizon.net**	19 से 25 जून
4.	शिकागो	**Niranjan Shah (R) 847-330-1088 Bipin Bhayani (O) 815-939-3190 (R) 815-939-0056**	26 से 29 जून
5.	डेट्रोइट	**SHIBIR & CONVENTION Prafulla shah (248) 910-6158 Email-praful0606@yahoo.com Atul Khara C : 469-831-2163 Email - insty@verizon.net**	30 जून से 7 जुलाई
6.	शिकागो	**Niranjan Shah (R) 847-330-1088 Bipin Bhayani (O) 815-939-3190 (R) 815-939-0056**	7 से 10 जुलाई
7.	लॉस एंजिल्स	**Naresh Palkhiwala (R) 562-404-1729 (O) 626-814-8425 ext. 8725 E-mail : naresh.palkhiwala@westcov.org**	10 से 14 जुलाई
8.	सिंगापुर	**Ashok Patni 006596357834**	19–21 जुलाई
9.	क्वालालम्पुर (मलेशिया)	**Nihalji shah 601 25226252 Email-shahnihalm@gmail.com**	22 से 23 जुलाई

पण्डित संजीवकुमारजी गोधा का विदेश कार्यक्रम

डॉ. भारिल्ल की तरह ही उनके शिष्य पण्डित संजीवकुमारजी गोधा, जयपुर को विगत वर्ष की भांति इस वर्ष भी (**JAANA**) ने धर्मप्रचारार्थ अमेरिका और कनाडा में आमंत्रित किया है, उनका नगरवार कार्यक्रम निम्नानुसार है– 30 मई से 6 जून – **डलास**, 7 से 13 जून – **शिकागो**, 14 से 20 जून – **मियामी**, 21 से 29 जून – **टोरंटो (कनाडा)**, 30 जून से 4 जुलाई – **डेट्रोइट।** आप उन्हीं स्थानों पर रुकेंगे, जहाँ डॉ. भारिल्ल रुकेंगे।

इसके अतिरिक्त **स्वानुभूति जैन मुम्बई** भी डेट्रोइट में होने वाले 'जाना' शिविर और 'जैना' के सम्मेलन में पहुँच रही हैं। वे भी डॉ. भारिल्ल के साथ ठहरेंगी।

(पृष्ठ 7 का शेष ...)

नहीं जानते; अपितु छह द्रव्यों को कुछ पर्यायों के साथ आगम-अनुमानादि परोक्ष प्रमाणों से जानते हैं।

इसप्रकार जो प्रत्यक्ष और परोक्षपने का अन्तर तथा सब पर्यायों के साथ सबको जानने और कुछ पर्यायों के साथ सभी द्रव्यों के जानने संबंधी अन्तर क्षायिकज्ञान और क्षयोपशमज्ञान में है, वह तो है ही। **(क्रमशः)**

कोहेफिजा-भोपाल में -

श्री सिद्धचक्र मण्डल विधान संपन्न

कोहेफिजा-भोपाल (म.प्र.) : यहाँ कोहेफिजा जैन समाज द्वारा दिनांक 21 से 27 अप्रैल तक श्री सिद्धचक्र महामण्डल विधान का आयोजन हुआ, जिसमें तत्त्वेत्ता डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल के प्रवचनों का लाभ मिला।

दिनांक 23 अप्रैल को महावीर जयन्ती के अवसर पर विशाल धर्मसभा का आयोजन श्री बाबूलालजी गौर (पूर्व मुख्यमंत्री म.प्र. शासन) के मुख्य आतिथ्य में किया गया। कार्यक्रम का संचालन श्रीमती कीर्ति चौधरी ने किया। संपूर्ण आयोजन को सफल बनाने में श्री महेन्द्रजी चौधरी, श्री सुनील जैन 501, श्री प्रभात बज, श्री महेन्द्र जैन (महावीर उद्योग) का सराहनीय योगदान रहा। इस अवसर पर टोडरमल स्मारक ट्रस्ट को विद्यार्थियों हेतु अनेक स्वीकृतियाँ भी प्राप्त हुई।

विधि-विधान के कार्य ब्र. अभिनन्दनकुमारजी शास्त्री खनियांधाना के निर्देशन में पूर्ण हुये।

देवलाली में अ.भा.दि.जैन विद्वत्परिषद द्वारा आयोजित-

विद्वत्संगोष्ठी

अखिल भारतीय दिगम्बर जैन विद्वत्परिषद द्वारा प्रशिक्षण शिविर के अवसर पर रविवार, दिनांक 2 जून 2013 को देवलाली में एक विद्वत्संगोष्ठी आयोजित होने जा रही है, जिसका विषय है **'जैनधर्म के प्रचार में पण्डित टोडरमलजी का योगदान'**। संगोष्ठी के संयोजक पण्डित शान्तिकुमारजी पाटील जयपुर रहेंगे। सभी विद्वानों एवं साधर्मियों से निवेदन है कि अधिक से अधिक संख्या में उपस्थित रहकर संगोष्ठी को सफल बनावें।

देवलाली में महाराष्ट्र प्रान्तीय -

श्री टोडरमल स्नातक परिषद का सम्मेलन

पण्डित टोडरमल स्नातक परिषद का **महाराष्ट्र प्रान्तीय सम्मेलन** प्रशिक्षण शिविर के अवसर पर शनिवार, दिनांक **1 जून 2013 को देवलाली में** आयोजित होने जा रहा है। जिसके अध्यक्ष पण्डित अभयकुमारजी शास्त्री, देवलाली, मुख्य अतिथि श्री शैलेषभाई चिमनलाल शाह एवं विशिष्ट अतिथि - श्री अवनीशभाई जे.मोदी होंगे। अतः महाराष्ट्र प्रान्त के सभी स्नातकों से निवेदन है कि अधिक से अधिक संख्या में उपस्थित रहकर अधिवेशन को सफल बनावें।

अखिल भारतीय जैन युवा फैडरेशन का -

अधिवेशन देवलाली में

अखिल भारतीय जैन युवा फैडरेशन का अधिवेशन देवलाली में आयोजित प्रशिक्षण शिविर के मध्य दिनांक 26 मई को आयोजित किया जा रहा है। अधिवेशन की पूर्व सन्ध्या में राष्ट्रीय कार्यकारिणी की मीटिंग आयोजित की गई है, जिसमें फैडरेशन द्वारा अभी तक किये गये कार्यों की समीक्षा एवं आगामी कार्यक्रमों की योजना पर विचार किया जायेगा। कार्यक्रम के अध्यक्ष श्री विपुलभाई कांतीलाल मोटाणी, मुम्बई एवं विशिष्ट अतिथि श्री हर्षदभाई माणेकलाल डेलीवाला व श्री डी. सुभाषचन्द जैन चांदीवाल, मुम्बई होंगे।

अधिवेशन में दिनांक 26 मई को सभी शाखाओं के अधिक से अधिक सदस्यों को उपस्थित होना है। शाखायें कम से कम 2 प्रतिनिधि अवश्य भेजें।

कार्यक्रम स्थल - पूज्य श्री कानजीस्वामी स्मारक ट्रस्ट, कहान नगर, लाम रोड़, बेलतगांव रास्ता, देवलाली-नासिक (महा.)

विधान एवं वार्षिकोत्सव संपन्न

कोटा (राज.) : यहाँ इन्द्रविहार स्थित श्री सीमंधर जिनालय में 3 से 5 मई तक 170 तीर्थंकर मण्डल विधान पूर्वक वार्षिकोत्सव संपन्न हुआ।

इस अवसर पर जिनमंदिर में सीमंधर भगवान की वेदी पर 64 चंवर स्थापित किये गये। साथ ही पण्डित संजीवकुमारजी गोधा जयपुर के मार्मिक प्रवचनों के अतिरिक्त पण्डित रतनचन्दजी चौधरी, पण्डित धर्मेन्द्रजी शास्त्री, पण्डित जयकुमारजी आदि स्थानीय विद्वानों का भी सान्निध्य प्राप्त हुआ।

रात्रि में पाठशाला के बच्चों द्वारा माता-देवियों की चर्चा एवं दीक्षा कल्याणक का रूप की प्रेरक चर्चा की गई। श्रीमती सीमा जैन एवं ज्योति जैन ने कार्यक्रम का संचालन किया।

विधि-विधान के समस्त कार्य पण्डित सुनीलजी 'धवल' भोपाल एवं कान्तिकुमारजी इन्दौर ने संपन्न कराये।

प्रकाशन तिथि : 13 मई 2013

प्रति,

सम्पादक : **पण्डित रतनचन्द भारिल्ल** शास्त्री, न्यायतीर्थ, साहित्यरत्न, एम.ए., बी.एड.
सह-सम्पादक : **पण्डित संजीवकुमार गोधा**, एम.ए. द्वय (जैनविद्या व तुलनात्मक धर्मदर्शन; इतिहास), नेट, एम.फिल (जैन दर्शन)
प्रकाशक एवं मुद्रक : **ब्र. यशपाल जैन** द्वारा जैनपथप्रदर्शक समिति के लिए जयपुर प्रिण्टर्स प्रा.लि., जयपुर से मुद्रित तथा त्रिमूर्ति कम्प्यूटर्स, श्री टोडरमल स्मारक भवन, ए-४, बापूनगर, जयपुर से प्रकाशित।

यदि न पहुँचे तो निम्न पते पर भेजें -
ए- 4 बापूनगर, जयपुर - 302015 (राज.)
फोन : (0141) 2705581, 2707458
E-Mail : ptstjaipur@yahoo.com **फैक्स :** (0141) 2704127